Bodhi-Path Year 2020 July Issue Volume 19 Page No 49-54

भारतीय इतिहास में पीपल वृक्ष का महत्व

डॉ संघमित्रा बौद्ध, बौद्ध अध्ययन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।
ई-मेल:sanghmb@gamil.com

पालि साहित्य में बोधिवृक्ष की पूजा विशेषोल्लेखनीय रही है। बोधि–वृक्ष वस्तुतः पीपल वृक्ष ही है। जिसके नीचे राजकुमार सिद्धार्थ ने स्वयं, अपने प्रयास से सम्बोधि प्राप्त की तदनन्तर वह संबुद्ध कहलाये। इसलिए यह पीपल वृक्ष बौद्ध जगत तथा पालि इतिहास में बोधि–वृक्ष के नाम से प्रसिद्ध हुआ। देश–विदेश में भी इसकी शाखाओं के रोपण का प्रचलन आरम्भ हुआ। सर्वप्रथम जम्बुद्वीप (भारत) से अन्यत्र अशोकपुत्री थेरी संधमित्रा द्वारा लंका में इसका रोपण किया गया। इस वृक्ष की भारत एवं श्रीलकां के सांस्कृतिक एवं अन्य सम्बन्धों को सुद्‌ढ़ बनाने में विशेष भूमिका रही है।

राजकुमार सिद्धार्थ ने वर्तमान बोधगया में जिस पीपल वृक्ष के नीचे बोधि प्राप्त की उसका बौद्ध धर्म में सर्वाधिक महत्व है। ऐतिहासिक तथागत बुद्ध से सम्बन्धित चार प्रमुख स्थान भी किसी प्रकार से वृक्ष विशेष से जुड़े हुए हैं, जैसे– बुद्ध का जन्म स्थान लुम्बिनी नामक शालवन में सुन्दर पुष्पित शाखाओं के मध्य, जहाँ सम्बोधि प्राप्त की उरूवेला (वर्तमान बोधगया) में बोधिवृक्ष (पीपल) के नीचे, धर्मचक्रप्रवर्त्तन किया सारनाथ के मृगदाय अर्थात् प्राकृतिक छत्र–छाया में तथा महापरिनिर्वाण को प्राप्त हुए कुशीनगर में शाल–वृक्ष के नीचे। ये बौद्ध–धर्म के प्रमुख चार तीर्थ स्थल है। इनमें से दूसरा उरूवेला (वर्तमान बोधगया) में नैरंजना नदी के तट पर स्थित बोधिवृक्ष का विशेष महत्व है। जिसके नीचे तथागत स्वंय अपने प्रयास से सम्यक्–सम्बुद्ध हुए अर्थात् उन्होंने सर्वज्ञता (संबोधि) प्राप्त किया। आज भी यह विश्व का सबसे प्राचीन तथा ऐतिहासिक महत्व वाला वृक्ष है एवं भारतवर्ष की सर्वाधिक मूल्यवान् साँस्कृतिक धरोहर है। सर्वप्रथम शाक्यमनि बुद्ध ने ही अपने साधना क्रम में इसकी अनिमिष पूजा की। श्रावस्ती के जेतवन में बोध गया से बोधिशाखा लाकर आनन्द ने लगायी। इस प्रकार बुद्ध के जीवन–काल में ही 'बोधिवृक्ष–पूजा' धर्म का अंग बन गई।

'बोधिवृक्ष' शब्द पालि परम्परा एवं बौद्ध धर्म के अन्तर्गत यह धर्म और दर्शन दोनों का ही प्रतिनिधित्व करता है। तथा जो मात्र तथागत बुद्ध के जीवन, उनकी साधनाओं एवं सम्बोधि को ही नहीं दर्शाता है। वरन् सम्पूर्ण बौद्ध जगत में व्याप्त धर्म शासन का केन्द्र है। बौद्ध परम्परा

में इसका अद्वितीय स्थान है। इसके दर्शन एवं पूजनार्थ समस्त बौद्ध–अनुयायी उत्सुक रहते है। इसके दर्शन मात्र से बौद्ध–अनुयायी साक्षात् बुद्ध–दर्शन जैसा लाभ प्राप्त करते हुए स्वयं को पुण्य एवं पवित्र मानते है। बुद्ध के सम्बोधि प्राप्ति के कारण इस बोधि–वृक्ष को बोधिद्रुम, महीरूह, महारूक्रव, महाबोधि, तथा महाबोधि–वृक्ष विशेषणों से विभूषित किया गया है।

श्रीलंका में महाबोधि शाखा का आरोपण बौद्ध–धर्म एवं संस्कृति के अन्तर्देशीय प्रचार–प्रसार का प्रतीक है। बौद्ध–धर्म का लंका में प्रवेश भारतीय सम्राट अशोक के समकालीन वहाँ के शासक देवानामप्रियतिष्य ई. पू. 247 के समय में हुआ। तृतीय धर्म संगीति के बाद सभापति स्थविर मोग्गलिपुत–तिस्स ने जिन विभिन्न देशों में भिक्षुओं को बुद्ध–धर्म प्रचारार्थ भेजा उनमें श्रीलंका भी एक था। जहाँ स्थविर महेन्द्र के नेतृत्व में चार स्थविर लंका द्वीप गए तथा वहाँ सद्धर्म की स्थापना की। इस प्रकार अशोक एवं देवानामप्रियतिष्य के मित्रतापूर्ण सम्बन्धों को स्थाविर महेन्द्र ने तदोपरान्त और भी सुदृढ़ किया। तत्कालीन लंका निवासियों में प्रमुख रूप से राजा देवानामप्रियतिष्य की बहिन अनुलादेवी ने बौद्ध–धर्म के प्रसार एवं प्रचार में पुरूषों के साथ–साथ स्त्रियों को भी प्रव्रजित होने का प्रस्ताव रखा और तब स्थविर महेन्द्र ने उचित मानकर भगिनी भिक्षुणी संधमित्रा को महिलाओं की प्रव्रज्या हेतु श्री लंका में बुलाने की व्यवस्था की। भिक्षुणी संधमित्रा को सम्राट अशोक ने बोधि–वृक्ष की शाखा–सहित लंका भेजा। इस शाखा का आरोपण अनुराधापुर में किया गया।

इस प्रकार बोधि–वृक्ष धर्म एंव संस्कृति के प्रचार–प्रसार क्रम में भारत व श्रीलंका के साँस्कृतिक आदान–प्रदान के इतिहास में सदा स्मरणीय है। तदोपरान्त लंका के बौद्ध– अनुयायी एवं साधारण जन ने जम्बुद्वीप (भारत) से लायी गई बोधि–वृक्ष की शाखा के आरोपणोपरान्त विकसित पीपल वृक्ष को आदर एवं विशेष सम्मान दिया तथा इस शाखा से विकसित वृक्ष को लंका की पहली राष्ट्रीय निधि के रूप में माना जाता है। यह ऐतिहासिक वृक्ष लंका में आज भी विद्यमान है, जिसकी गणना संसार के सबसे पुराने वृक्षों में की जाती है। श्रीलंका और भारत के साँस्कृतिक गठबन्धन का सर्वोत्तम प्रतीक यही बोधिवृक्ष है। दक्षिण–पूर्व एशिया की परम्परा में बौद्धधर्म का अप्रतिम योगदान है।

पीपल वृक्ष का दार्शनिक रूप लेकर ऋग्वेद में कहा गया है कि गतिशील जीवात्मा एवं परमात्मा दो पक्षियों की तरह पीपल वृक्ष पर स्थित है। जीवात्मा स्वादिष्ट पीपल के फल खाता है तथा परमात्मा उन्हें न खता हुआ केवल द्रष्टा रूप में रहता है। यह द्रष्टान्त भारतीय परम्परा में वृक्ष की पवित्रता एवं मान्यता का परिचायक है।

द्वा सुनर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिवस्वजाते।

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्यो अभिचाकशोति।।२०।।

(ऋग्वेद सूक्त–१.१६४, श्लोक–२०)

प्द्मपुराण में अश्वत्थ (पीपलवृक्ष) की महिमा का वर्णन अपरम्पार है। कहा गया है कि अश्वत्थ पूजने से सभी देवतओं की पूजा हो जाती है–''अश्वत्थ पूजितो येन पूजिताः सर्व देवताः।''

भारतीय संस्कृति में न्यग्रोध एवं अश्वत्थ दोनों ही आदृत वृक्ष है– **''यत्राश्वत्था न्यग्रोधा महावृक्षाः शिखण्डिनः'' (ऋग्वेद– ४.३७.६४)**

पीपल का चित्रण सिन्धु–सभ्यता में भी हुआ है। सिन्धु सभ्यता की खुदाई में, ऐसी मुद्राऐं मिली हैं जिन पर पीपल एवं शमी जाति का एक वृक्ष प्रधान रू॰ से अंकित है। मोहनजोदड़ों से प्राप्त एक मुद्रा पर दो जुड़वा पशुओं के शीश पर नौ(9) पीपल की पत्तियाँ दिखाई गई हैं। एक अन्य मुद्रा पर नग्न नारी पीपल वृक्ष की आत्मास्वरूप देवी एवं पीपल की टहनियाँ अंकित हैं। यह चित्रण धार्मिक परिप्रेक्ष्य में स्पष्ट है।

भारतवर्ष में वृक्ष–पूजा की एक दीर्घ परम्परा है। उसकी प्राचीनतम आहत–मुद्राओं के ऊपर भी वृक्षों के चित्र मिलते हैं। कालान्तर में भरहुत, साँची, अमरावती आदि स्तुपों पर भी भगवान् बुद्ध का प्रतीकांकन बोधिवृक्ष के द्वारा दर्शाया गया है।

आयुर्वेद जगत् में भी पीपल वृक्ष का प्रयोग औषधि निर्माण के लिए किया जाता है। प्राचीन आयुर्वेद के सुश्रुतसंहिता, चरकसंहिता, अष्टाड्.गहृदय एवं अथर्ववेद आदि ग्रन्थों में भी 'पीपल' तथा 'अश्वत्थ' दोनों ही नाम से इसके औषधि–गुणों का वर्णन मिलता है।

वर्तमान वैज्ञानिक सन्दर्भ में भी पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण में भी पीपलवृक्ष का अत्याधिक महत्त्व है। वनस्पतिज्ञों की दृष्टि में अन्य वृक्षों की अपेक्षा पीपल वृक्ष सदैव प्राणवायु (ऑक्सीजन) देता है। चारों ओर फैली प्रदूषित एवं विषैली घतक वायु को शेषित करके शुद्ध प्राणवायु को छोड़ता है। इसलिए प्राकृति–जगत के सभी वृक्षों में पीपल को एक अत्यन्त क्षमतावान् शक्तिशाली वृक्ष माना गया है। अथर्ववेद में इस की ओर आकृष्ट करते हुए कहा गया है –

'यथाश्वती वानस्पत्यानारोहन् कृणुषेऽधरान्।' (३.६.५)

अश्वत्थ अर्थात् अश्व के समान बलवान् है। अश्वत्थ वीर है जो अन्य वृक्षों के सिर पर पाँव रखकर खड़ा हो जाता है।

अतः पीपल भारतीय संस्कृति का मूल वृक्ष रहा है। सदियों से चले आ रहे इस वृक्ष के प्रति यह आदर भाव आज के वैज्ञानिक विकास के बावजूद भी अत्यंत गहरा और अमिट है। यही कारण है कि वृक्षों के अंधाधुंध काटे जाने पर जहाँ जंगल व बाग तक खत्म हो गए, पीपल आज भी सिर उठाए खड़ा है। इन आस्थाओं के कारण न केवल पीपल वृक्ष की ही जीवन–रक्षा हुई है, अपितु पीपल के रूप में पृथ्वी पर स्थित हरीतिमा को भी जीवनदान मिला है। अतः धरा की हरीतिमा की रक्षा हेतु अधिक से अधिक संख्या में पीपल वृक्ष का रोपण करना चाहिए। पीपल केवल वृक्ष ही नहीं है, यह एक आस्था, एक सनातन विश्वास, एक जीवन–दर्शन है, जो अनादिकाल से आज तक जीवंत है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

(अ) (पालि ग्रन्थ)

रामशंकर त्रिपाठी (सं.) अट्ठसालिनी, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1989

भिक्षु जगदीश काश्यप (संशो.) चुल्लवग्ग बिहार राजकीय पालि प्रकाशन, बिहार, 1956

भिक्षु ध्म्मरक्षित (सं.) जातकट्ठकथा (दो भाग) भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1944

भदन्त आनन्द कौसाल्यायन, जातकपालि (छः खण्ड), हिन्दी साहित्य सम्मेलन, 1982

भिक्षु उत्तम, बुद्धवंस, पालि पब्लिकेशन बोर्ड, नालन्दा, 1958

महेश तिवारी (सं. एवं अनु.), निदान कथा, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी,1970

भदन्त आनन्द कौसल्यान (अनु.), महावंस, हिन्दी–साहित्य–सम्मेलन प्रयाग, 1942

भिक्षु जगदीश काश्यप (प्र. संशो.), महावंसटीका, नव–नालन्दा महाविहार, पटना,1971

(आ)

भदन्त आनन्द कौसल्यान, श्री लंका, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, संस्करण, 1969

भदन्त आनन्द कौसल्यान, निदान –कथा हिन्दी साहित्य–सम्मेलन, प्रयाग, सं. 2013

भरतसिंह उपाध्याय, दक्षिण–पूर्वी एशिया का इतिहास, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, संस्करण 1952

भरतसिंह उपाध्याय, पालि साहित्य का इतिहास, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण,1986

भरतसिंह उपाध्याय, बुद्धकालीन भारतीय भूगोल, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, चतुर्थ संस्करण,1983

भागचन्द्र जैन, जैन धर्म और पर्यावरण, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, दिल्ली संस्करणः2001

रामजी उपाध्याय, प्राचीन भारतीय साहित्य की सांस्कृतिक भूमिका देवभारतीय एवं लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 1966

शान्तिभिक्षु शास्त्री (अनु.) ललितविस्तर, उत्तर प्रदेश , हिन्दी संस्थान, लखनउ, द्वितीय संस्करणः1992

(इ) संस्कृत ग्रंथ

उमाशंकर शर्मा '½षि' (सं.) ½ग्वेद–संहिता, वाराणसी, चौखम्बा, विद्याभवन द्वितीय संस्करण, 1989

झारखण्डे ओझा एवं उमापति मिश्र (सं. एवं व्या.), धन्वन्तरिनिघण्टुः काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, संस्करण,1985

पण्डित पन्नालाल जैन साहित्याचार्य (सं.) पद्म पुराणम्, काशी भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण 1944

पी. एल. वैद (सं.) दिव्यादान, दरभंगा मिथिला सोसायटी, संस्करणः1959

हरिकृष्णदास गोयन्का (अनु.), श्रीमद्भगवद्गीता, गोरखपुर गीता प्रेस,सं. 2008